Paper Name : **Philosophy, Religion and Culture in Sanskrit Tradition**

Class : **B.A. Programme (Sanskrit DSE)**

Semester : **VI**

Teacher Name : **Dr. Neelam Gaur**

पंचमहायज्ञ

वैदिक संस्कृति यज्ञ प्रधान संस्कृति रही है। उत्तर वैदिक काल में भी यज्ञ व्यवस्था का प्राचुर्य देखने को मिलता है। आरण्यक ग्रन्थों, ब्राह्मण ग्रन्थों तथा मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में नित्य के धार्मिक कार्यों में विशेष रूप से गृहस्थ के लिए पंच महायज्ञों को अनिवार्य बताया गया है। वस्तुतः पंचमहायज्ञ प्रायश्चित सवरूप किया जाता था। गृहस्थ द्वारा अग्नि जलाने, कूटने, पीसने आदि में अनायास होने वाले पापकार्यों के प्रायश्चित स्वरूप इन यज्ञों को करने का विधान किया गया है। इनका मुख्य उद्देश्य सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव के प्रति भी अहिंसात्मक दृष्टि को अपनाना था।

तैत्तिरीय आरण्यक और शतपथ ब्राह्मण के अनुसार पंच महायज्ञ हैं– ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ, तथा नृयज्ञ।

'' पंच वा एते महायज्ञाः सतति संतिष्ठते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो महायज्ञ इति '' तै0 आ0 2 . 10

'' पंचैव महायज्ञः। तान्येव महासत्राणि भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञः पितृयज्ञो देवयज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति। '' श0 ब्रा0 11.5.6.1

मनुस्मृति क चतुर्थ अध्याय में भी पंचमहायज्ञों का वर्णन किया गया है–

''ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा, नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथाशक्ति न हापयेत्।''

अर्थात् ऋषियज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ, नृयज्ञ और पितृयज्ञ इन पांच महायज्ञों को यथाशक्ति छोडना नहीं चाहिए अपितु इनका अनुष्ठान करते रहना चाहिए।

<u>ऋषियज्ञ</u> –

यह ब्रह्मयज्ञ भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गत स्वाध्याय और सन्ध्योपासना ये दो कार्य आते हैं। स्वाध्याय का अर्थ है ऋषिप्रणीत ग्रन्थों का पठन पाठन चिन्तन मनन करना। अपने दुर्गुणों को दूर करके सद्गुणों की अभिवृद्धि के लिए प्रयत्न करना। सन्ध्योपासना से तात्पर्य प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व से सूर्यदर्शन तक तथा सूर्यास्त के समय आकाश में नक्षत्रोदय तक गायत्री जाप , प्राणायाम करना होता है। मनु द्वारा सन्ध्योपासना के लिए खुले स्थान का निर्देश किया गया है और प्राणायाम व मन्त्रजाप को अनिवार्य बताया गया है।

इस प्रकार ब्रह्मयज्ञ/ऋषियज्ञ द्वारा ऋषियों के प्रति श्रद्धा की अभिव्यक्ति और ज्ञान की धारा प्रवाहित की जाती थी।

देवयज्ञ –

इसे अग्निहोत्र भी कहा जाता है। देवयज्ञ करते समय व्यक्ति को अपनी शुद्धता पवित्रता के साथ साथ स्थान की भी स्वच्छता का ध्यान रखना होता था। स्वस्तिवाचन, शान्तिपाठ के मन्त्रों द्वारा अग्नि को आहुति देना, देवस्तुति करना तथा विश्वकल्याण को कामना करना ही देवयज्ञ या अग्निहोत्र कहलाता है। यह भी प्रातः और सांय दोनों समय करने का विधान मिलता है। ऐसा माना जाता है कि मानव का समृद्ध जीवन देवताओं की देन है अतः देवयज्ञ द्वारा उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने की भावना थी। यह मानव और समाज दोनों के लिए कल्याणकारी यज्ञ होता था।

भूतयज्ञ–

इस यज्ञ को बलिवैश्वदेव यज्ञ भी कहा जाता है। भूतयज्ञ का विधान भोजन करने के पूर्व होता है। इसमें मिष्ठान्न आदि भोजन की आहुति अग्नि में दी जाती है और उसके बाद कुत्ता , कोढी आदि प्राणियों व पक्षियों का भाग निकाल कर उन्हें सन्तुष्ट किया जाता है। इसका वर्णन पंचतंत्र में भी मिलता है। लब्धप्रणाश के अन्तर्गत वानर मकर कथा में वानर द्वारा मकर के लिए बलिवैश्वदेव यज्ञ ही किया जाता है।

न पृच्छेच्चरणं गोत्रं न च विद्यां कुलं न च।
अतिथिं वैश्वदेवान्ते श्राद्धे च मनुरब्रवीत्।।

वस्तुतः यह यज्ञ दान और त्याग की भावना के साथ साथ असमर्थ प्राणियों के कल्याण की कामना से युक्त होता था।

पितृयज्ञ –

पितृ शब्द से तात्पर्य पिता, माता पिता, गुरुजनों और पूर्वजों से है। पितरों अथात् पूर्वजों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना, माता पिता की सेवा करना,गुरुजनों की आज्ञा का पालन करना– ये सभी पितृयज्ञ में आते हैं। श्राद्ध के अवसर पर पितरों के लिए किया जाने वाला पिण्ड तर्पण भी इस यज्ञ के अन्तर्गत आता हैं।

याज्ञवल्क्य स्मृति 1.269–70 के अनुसार अन्न जल आदि श्राद्धीय द्रव्य से पितर तृप्त हो जाते हैं और दीर्घायु , विद्या , धन, संतति आदि सुख प्रदान करते हैं।

इस प्रकार पूर्वजों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना तथा सृष्टि प्रकिया में सहयोग करना ही पितृयज्ञ का मुख्य उद्देश्य होता था।

नृयज्ञ –

इस यज्ञ को अतिथि यज्ञ भी कहा जाता है। अतिथियों का सत्कार करना ही नृयज्ञ कहा जाता है। शास्त्रों में अतिथि को देवता कहा गया है।

अथर्ववेद में वर्णित है कि अतिथि गृहस्थ का भोजन नहीं खाता अपितु उसके पापों का भक्षण करता है। अथर्व0 9.6.25,26

आपस्तम्ब धर्मसूत्र के अनुसार –

''प्रिया अप्रियाश्च अतिथयः स्वर्गलोकं गमयन्तीति विज्ञायते।''

अर्थात् अतिथि प्रिय हो या अप्रिय उसका सत्कार करना मनुष्य को स्वर्ग पहुंचाने वाला होता है।

मनु द्वारा भी सभी वर्णों के अतिथियों के सत्कार पर बल देते हुए कहा है–

उत्तमस्यापि वर्णस्य नीचः अपि गृहमागतः।
पूजनीयो यथायोग्यं सर्वदेवमयो अतिथिः।।

शास्त्रों में यद्यपि गृहस्थों के लिए अतिथि सत्कार अनिवार्य कर्तव्य के रूप में बताया गया है तथापि पाखण्डी, विरुद्धकर्मी, शठ, हेतुवादी,बकवृत्ति जैसे अतिथियों की वाणीमात्र से भी सेवा न करने का निर्देश दिया है–

पाषण्डिनो विकर्मस्थान्वैडालव्रतिकांछठान्।
हैतुकान्वृत्तिश्च वाड्.मात्रेणापि नार्चयेत् ।।

इस प्रकार नृयज्ञ पारस्परिक सहयोग की भावना की वृद्धि करने वाला यज्ञ था।

मनुस्मृति के अनुसार इन पंचमहायज्ञों में किसी विशेष आयोजन की कोई आवश्यकता नहीं होती थी।

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्।
होमो दैवी बलीर्भीतौ नृयज्ञः अतिथिपूजनम्।।

मानव को कर्तव्यों के प्रति सचेत करने वाले ये यज्ञ उसकी सामाजिक, सांस्कृतिक और चारित्रिक विशेषताओं के भी परिचायक थे।